Chapter-1

प्रथम अध्याय

गुजरात में हिन्दी भाषा का उद्‌भव एवं विकास

सर्व प्रथम हम गुजरात शब्द की व्युत्पत्ति, गुजरात की भौगोलिक सीमा, गुजरात में हिन्दी का उद्‌भव एवं विकास, गुजरात का महत्त्व, गुजरात की ऐतिहासिक परिस्थितियाँ, सांस्कृतिकता एवं धार्मिकता का भाषा पर असर आदि मुद्दों पर विचार करेंगे । तत्पश्चात् हिन्दी भाषा का गुजरात में जो विकास हुआ है उसकी चर्चा करेंगे ।

"गुजरात" शब्द की व्युत्पत्ति के बारे में विद्वानों ने अपने संशोधनार्थ विविध मत माने है । कई विद्वानों के मतानुसार "गुजरात" नाम "गुजर" नामक गोप जाति ने दिया है । इस जाति के कितने ही कुल राजकुल में नांदोद का चेदि राजवंश "गुर्जर-नृपतिवंश" संज्ञा से विख्यात था । इन गुर्जरों का उस समय निवास प्रदेश प्रधानतः मारवाड़ था । आज के गुजरात में इनकी व्यापकता वहाँ से हुई थी । हर्षचरित के लेखक बाणभट्ट ने सम्राट हर्षवर्द्धन के पिता प्रभाकरवर्द्धन को "गुर्जरप्रजागरः" कहा है, इन गुर्जर लोगों से मारवाड़ के ही गुर्जरों की ओर स्पष्टतया संकेत है ।

"दसवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में सुप्रसिद्ध अरबी यात्री अलबरुनी द्वारा अपने प्रवास ग्रंथ "अल हिन्द" में एक प्रदेश का नाम "गुज्रात" स्पष्ट रूप में दिया गया है {ई०स० 970 - 1030} इनके मत से वह प्रदेश आबू से लेकर जयपुर तक का था । उत्कीर्ण लेखों में संस्कृतिकृत "गुर्जरप्राभूमि" "गुर्जरत्रामण्डल" "गुर्जरत्ता" "प्राकृत" "गुज्जरत्ता" इन नामों से संकेतित प्रदेश भी आबू से लेकर उत्तर का विशाल मारवाड़ प्रदेश ही था । इस बात का समर्थन हमें हिन्दी साहित्य कोश में भी प्राप्त है । यथा, "दसवीं शताब्दी पूर्व इस प्रदेश का नाम "गुर्जरत्रा" "गुर्जरत्रा मंडल" "गुर्जर गुज्जर देश" आदि रूपों में उल्लेखित मिलता है जिसका सम्बन्ध प्रायः पांचवी शती उत्तरार्ध से छट्ठी शती पूर्वार्द्ध तक भारत में प्रविष्ट होनेवाली "गुर्जर" जाति से है ।"[1]

1- हिन्दी साहित्य कोश, भाग- - पृ0 267

"गुजरात" शब्द का मूल स्व0 नरसिंहराव दिवेतिया ने अरबी बहुवचन के स्त्रीलिंगवाची प्रत्यय "आत" से संयुक्त "गुजआत" "गुज्रात" रूप में भी माना है । जिस प्रदेश में गुजरों की संख्या अधिक थी उस प्रदेश का नाम "गुज्रात"पड़ा, और अरबी बहुवचन के कारण निष्पन्न "गुजरात" यह इस देश का नाम भी स्त्रीलिंगवाची रहा । समय के साथ आबू के दक्षिण में स्थित वर्तमान गुजरात प्रदेश के लिए "गुर्जरत्रा" या "गुज्जरत्ता" नाम प्रयुक्त होने लगा । इस प्रकार दसवीं शताब्दी से इस प्रदेश को जो नाम मिला, वह आज भी चल रहा है ।

चौदहवीं शताब्दी की गुजरात की भाषा का नाम "गुजर भाषा" था । भालण ने {ई0स0 1500 - 1550 के लगभग} अपने ग्रंथों में लिखा है - "गुजर भाषाए नलराना गुण मनोहर गाऊँ {नलाख्यान - 1 - 1} भाषा के लिए "गुजराती" नाम सबसे पहिले गुजरात के आख्यान कवि प्रेमानन्द ने {1650 - 1700 के लगभग} अपने "दशम स्कन्ध" की इस पंक्ति में "बाँधुं नागदमण गुजराती भाषा" इस प्रकार किया है । यह नाम बर्लिन के एक ग्रन्थपाल लाकोचेन ई0सन् 1931 में अपने एक ग्रन्थ में प्रयुक्त किया था ।

वर्तमान गुजरात प्रदेश के लिए देशवाचक "गुजरात" नाम द्वितीय सोलंकी भीमदेव के समय में रूढ बना था । इसका सबसे पहला प्रमाण तो नाल्हकृत "बीसलदेव रासो" {ई0स0 1216} के "समन्द सोरठ सारी गुजरात" {1 - 6} और उसके बाद "आबू रास" {ई0स0 1233} के गुजरात - धुर - समुधरण राणउ लूणपसाउ" {1} इन वचनों से मिलता है ।

अगर हम गुजरात प्रदेश के उदय एवं सीमा पर गौर करें तो स्वतंत्रता के अनन्तर भाषाधार राज्यों की मांग के परिणामस्वरूप भारत के राजनीतिक नक्शे पर 1 मई सन् 1960 के दिन गुजरात राज्य का उदय हुआ । अलग-अलग विद्वानों ने उसकी सीमा अलग-अलग ढंग से दी है ।

श्री अरविंद कुमार के मतानुसार "इसकी सीमा उत्तर में राजस्थान, दक्षिण में महाराष्ट्र, पूर्व में खानदेश और मालवा तथा पश्चिम में अरब समुद्र तक फैली हुई है ।[1] ठीक उसी तरह के०का० शास्त्री ने भी गुजरात की सीमा पर विचार किया है । उनके मत से"उत्तर में पाकिस्तानी सिन्ध की एवं राजस्थान के आबू की उपत्यका पुराने सिरोही राज्य की दक्षिणी सीमा, पुराने उदयपुर राज्य की दक्षिण - पश्चिमी सीमा, पूर्व में डूंगरपुर - बांसवाड़ा के विशाल वागड़ प्रदेश की एवं मध्यप्रदेश की पश्चिमी सीमा महाराष्ट्र के खानदेश की पश्चिमी सीमा, दक्षिण में महाराष्ट्र के नासिक एवं थाना जिला की उत्तरीय सीमा और पश्चिम में सौराष्ट्र कच्छ को अपने में समाविष्ट करके विशाल अरब समुद्र है" ।[2]

यदि हम रामकुमार गुप्तजी की दृष्टि से गुजरात की भौगोलिक स्थिति का अवलोकन करें तो -

1. उत्तर गुजरात - आबू तथा मही नदी का मध्यवर्ती प्रदेश
2. दक्षिण गुजरात - मही तथा दमणगंगा का मध्यवर्ती प्रदेश
3. दमणगंगा का दक्षिण भूभाग - जिसमें सालीसट एवं बम्बई का मिश्रभाषी प्रदेश भी समाविष्ट हो जाता है ।
4. कच्छ प्रदेश
5. सौराष्ट्र कल्पद्वीप[3]

---

1. गुजरात का हिन्दी को योगदान - अरविंदकुमार म० देसाई - पृ० 346
2. गुजरात की हिन्दी को देन - श्री केशवराम के० शास्त्री - पृ० 22
3. हिन्दी साहित्य को गुजरात के संत कवियों की देन - रामकुमार गुप्त - पृ० 26

श्री नागरजी की दृष्टि से देखें तो "पूर्व में दाहोद से पश्चिम में द्वारका तक फैले हुए और उत्तर में आबु से दक्षिण में दमणगंगा तक के गुजरातीभाषी प्रदेश को गुजरात कहा जाता है ।[1]

शिवप्रसादजी ने "गुजरात एक दर्शन" में लिखा है कि "गुजरात का समग्र विस्तार उष्ण कटिबन्ध में आया हुआ है । उसका दक्षिण – उत्तर विस्तार 20.3 और 24.5 उत्तर अक्षांश के बीच आता है । जबकि पूर्व पश्चिम विस्तार 68.2 और 74.4 पूर्व रेखांश के बीच आता है । गुजरात पश्चिम हिन्दी के किनारे उत्तर भाग में है । उसके उत्तर में मारवाड़, मेवाड़, सिरोही और कच्छ का मरुस्थल तथा अरावली गिरिमाला का आबु, आरासुर, तारंगा और साबरकांठा के पर्वत आते हैं । पूर्व में बांसवाड़ा, खानदेश, अलीराजपुर और झाबुआ तथा सह्याद्रि गिरिमालाएँ हैं । पश्चिम की ओर अरबी समुद्र, बंगाल की खाड़ी और कच्छ की खाड़ियाँ हैं । पूर्व की सरहद पर सातपुड़ा और पश्चिम घाट की शाखाएँ हैं ।

इस प्रकार "उत्तर में मरु प्रदेश और पहाड़ों से, दक्षिण में और पूर्व में पहाड़ों और जंगलों से तथा पश्चिम की ओर से छिछले और अशान्त समुद्र से गुजरात आरक्षित है" ।[2]

गुजरात प्रदेश की उक्त भौगोलिक सीमाओं पर विचार करने से सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि गुजरात के उत्तर और उत्तर पूर्वी सीमाओं को छोड़कर अन्य सभी सीमाओं पर अधिक प्राकृतिक अवरोध है । परिणामस्वरूप पश्चिमोत्तर में सिन्ध तथा दक्षिण पूर्व में महाराष्ट्र से मिले होने पर भी गुजरात सांस्कृतिक सामाजिक आदि सभी दृष्टियों से हिन्दी भाषी प्रदेश राजस्थान तथा मालवा के अधिक निकट है । गुजरात तथा हिन्दी भाषी प्रदेश के बीच विशेष प्राकृतिक अवरोधों के न होने के कारण इन दोनों प्रदेशों के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान की परम्परा प्राचीन काल से ही मिलती है ।

---

1. हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में गुजरात का योगदान – डॉ० नागर – पृ० ।
2. गुजरात एक दर्शन – शिवप्रसाद भी. राजगोर – पृ० ।

गुजरात और हिन्दी : डॉ0 रमणलाल पाठक ने अपने "गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास भाग-1" में गुजरात और हिन्दी के बारे में यों बताया है "गुजरात में हिन्दी भाषा 12 वीं शताब्दी से मिलने लगती है और पन्द्रहवीं शताब्दी तक आते आते हिन्दी भाषा का प्रचार – प्रसार एवं अनुशीलन अन्य अहिन्दी प्रदेशों की तुलना में तो अधिक है ही पर हिन्दी भाषी प्रदेशों की तुलना में भी नगण्य नहीं है" ।[1]

"हिन्दी शब्द का प्रयोग हिन्दी साहित्य के इतिहास में व्यापक अर्थ में किया गया है ।" इस शब्द का प्रयोग किसी एकरूपा भाषा के लिए ही न होकर एक भाषा परम्परा के लिए ही होता आया है" ।[2]

गुजराती संतों ने गुजराती के अतिरिक्त जिस भाषा को अपनी वाणी का माध्यम बनाया वह अवधी, ब्रज, पंजाबी, राजस्थानी, हिन्दवी, हिन्दुस्तानी, खड़ी बोली के साथ-साथ प्रादेशिक प्रभावों से भी अछूती नहीं थी, अर्थात् मिली-जुली भाषा का प्रयोग विशेष प्रकार से होता था । यही कारण है कि हिन्दी साहित्य के विद्वानों ने इस मिली-जुली भाषा के "सधुक्कड़ी" हिन्दी "साधु भाषा" या "खिचड़ी भाषा" आदि नामों का उल्लेख किया है । "गुजरात के सन्तों की हिन्दी वाणी वस्तुतः किंचित

---

1. गुजरात के हिन्दी साहित्य का इतिहास भाग-1 – डॉ0 रमणलाल पाठक – पृ0

2. हिन्दी साहित्य – आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

प्रादेशिक वैशिष्ट्य सहित सन्त टकसाली - सधुक्कड़ी हिन्दी है ।[1] इसमें भाषा का ढांचा खड़ी बोली का है तथा शब्द भंडार न केवल हिन्दी की भाषा - विभाषाओं से बल्कि पंजाबी, कच्छी, मराठी, गुजराती, सिंधी, अरबी - फारसी आदि से सम्बन्ध किया गया है अर्थात् इस इस हिन्दी को भी "सधुक्कड़ी हिन्दी" कह सकते हैं । अध्ययन की सुविधा हेतु इस सन्तवाणी को "हिन्दी" शब्द से अभिहित किया गया है । यह वस्तुतः वही भाषा थी जो कि आज से शताब्दियों पूर्व भारत के सांस्कृतिक केन्द्रों पर बोली और समझी जाती थी तथा अन्तरप्रान्तीय व्यवहार के लिए अन्तरभाषा के रूप में प्रयुक्त होती थी, इस बात का समर्थन ग्रियर्सन महोदय ने भी किया है ।[2]

आगे जाकर इस भाषा का कोई सीमित क्षेत्र नहीं था । सभी धार्मिक स्थलों, मन्दिरों, तीर्थस्थानों और सांस्कृतिक केन्द्रों पर भी हिन्दी भाषा बोली और समझी जाती थी परन्तु गुजरात के सीमित प्रदेश में हिन्दी भाषा का व्यापक रूप में प्रचार-प्रसार एवं प्रयोग होता रहा ।

मूलतः गुजराती और हिन्दी भाषा (व्रजभाषा) दोनों ही भारतीय आर्यकुल की भाषाएँ हैं तथा दोनों का मूल पश्चिम शौरसेनी अपभ्रंश में है ।[3] इसके पश्चात् जिस भाषा का उद्भव एवं विकास होता गया, विद्वानों ने उसकी पहचान अलग-अलग अंदाज में दी है । जैसेकि डॉ० तेस्सितरी ने "ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी" नाम से अभिहित किया । श्री नरसिंहराव दिवेटिया ने "गुर्जर अपभ्रंश" नाम दिया तो श्री उमाशंकर जोशी ने "मारु गुर्जर" कहा [illegible] तथा डॉ० हिरालाल माहेश्वरी ने "मरु भाषा" कहा है[4] अर्थात् यही भाषा अपना नाम बदल कर समय समय पर हमारे सामने नया रूप लेकर आती रही ।

1- गुजरात के सन्तों की हिन्दी वाणी - डॉ० अम्बाशंकर नागर, डॉ० रमणलाल पाठक - पृ० 27

2- गुजरात के हिन्दी गौरव ग्रंथ - डॉ० अम्बाशंकर नागर - पृ० 1

3- गुजराती फोनोलोजी, प्रो० टर्नर - पृ० 2

4- राजस्थानी भाषा और साहित्य - डॉ० हिरालाल माहेश्वरी - पृ० 4

यही कारण है कि "पुरानी" पश्चिमी राजस्थानी से ही गुजराती एवं हिन्दी की स्वतंत्र सत्ता स्थापित हुई । डॉ० सुनिति कुमार चेटर्जी के मत से "पुरानी पश्चिमी राजस्थानी" से गुजराती एवं हिन्दी की स्वतन्त्र सत्ता सोलहवीं शती में कायम हुई ।[1] धीरे-धीरे इन भाषाओं का विकास होता गया । इसके भाषा रूप में शब्द रूप में नवीनता दृष्टिगत होने लगी । ये भाषाएँ परिवर्तन के शिखर पर चढ़ कर विकास की चोटी की ओर उन्मुख हुई । यही कारण है कि "सत्रहवीं शताब्दी के मध्य से अर्वाचीन गुजरात के चिन्ह स्पष्टदिखाई पड़ते हैं" ।[2] उसी समय अर्वाचीन गुजराती भाषा के विकास के पथ पर ही हिन्दी भाषा का आरूढ होना ही उसका विकास दर्शाता हैं ।

मध्य युग से तो गुजरात में ब्रजभाषा का व्यापक प्रचार रहा । ब्रजभाषा का प्रभाव इसें तत्कालीन सन्तों और वैष्णव कवियों पर विशेष नजर आता है । उन्होंने खड़ी बोली में भी रचनाएँ की है । अखा प्राणनाथ और दयाराम को इस मध्यकालीन हिन्दी काव्य भाषा के प्रमुख कवियों के रूप में स्वीकार किया गया है । उस समय कच्छ-भुज में एक काव्य पाठशाला की स्थापना की गई जो एशिया भर में बेनमून थी । वह उस समय की सुप्रसिद्ध एवं समृद्ध पाठशाला थी । जिसमें हिन्दी क्रम में कविता बनाने की कला की शिक्षा दी जाती थी । जहाँ दूर दूर से साहित्य रसिकगण पढ़ने आते थे । अर्थात् उस समय से ही हिन्दी भाषा का प्रचार एवं प्रसार पूरे भारत की अपेक्षा गुजरात में सर्वाधिक रूप में मिलता है जो कि हिन्दी भाषी क्षेत्र नहीं है । मध्यकाल में 15 वीं शताब्दी के आसपास "गुजरात में "गुजरी" नामक एक विशिष्ट हिन्दी शैली विकसित हुई है" ।[3]

---

1. ओरिजीन एंड डेवलपमेंट ऑफ द बेंगाली लेंग्वेज वॉल्यूम-1 – डॉ० सुनीति कुमार चैटर्जी

2. हिन्दी साहित्य कोश – पृ० 267
3. गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा तथा आचार्य गोविन्द गिल्लाभाई – डॉ० मालारविन्दम् चतुर्वेदी – पृ० 31

गुजरात के सूफी कवियों ने उसमें बहुत से काव्यों की रचना भी की है । अतः हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी भाषा के विकास का वह स्वर्णयुग था । आधुनिक युग में भी गुजरात ने देश को महान नेता प्रदान किये हैं – स्वामी दयानन्द और गांधीजी । "स्वामी दयानन्द भी गुजरात के ही थे, दोनों ही ने हिन्दी को देश की भाषा का गौरव प्रदान किया, दोनों ने ही हिन्दी को पुष्ट और समृद्ध करने के प्रयत्न किये"।[1] गुजरात ने हिन्दी भाषा को आज जो स्थान समान व्यवहार एवं राज्य में दिया है, उससे गुजरात का गौरव बढ़ता है । देश का मस्तक जब महात्मा गांधी या स्वामी दयानन्द के लिए झुकता है तो वह गुजरात ही के अभिनन्दन के लिए झुकता है क्योंकि इस भूमि की दृष्टि वस्तुतः सत्य को ग्रहण करनेवाली रही है ।

प्रारम्भ से ही हिन्दी भारत के सभी प्रान्तों में न केवल बोली व समझी जाती है, परन् उसमें प्रायः समस्त प्रान्तों के अहिन्दी भाषी लेखकों द्वारा साहित्य सृजन हुआ है ।[2] अगर हम गुजरात का हिन्दी भाषा के प्रति आकर्षण देखें तो हमें उसमें निहित कारणों को जानना आवश्यक हो जाता है । यह बात विचारने योग्य तो है ही कि गुजरात एक अहिन्दी भाषी प्रदेश होते हुए भी गुजरात में ही हिन्दी का इतना महत्व हिन्दी का इतना विकास, [illegible] उत्कृष्ट साहित्यिक रचनाएँ हिन्दी भाषा को दूसरी राजभाषा का स्थान आदि के विषय में जानना जरूरी हो जाता है ।

गुजरात में हिन्दी के प्रचार-प्रसार एवं विकास में गुजरातियों की महान सेवा अवर्णनीय है । हिन्दी भाषा का एक अहिन्दी प्रदेश गुजरात में विकास के कई कारण है । उसे हम अलग-अलग अंदाज से देख सकते हैं ।

1– प्रस्तावना ख
डॉ० नटवरलाल अम्बालाल व्यास – गुजरात के कवियों की हिन्दी साहित्य को देन

2– सप्तम् हिन्दी साहित्य सम्मेलन, कार्य विवरण – पृ० 14

प्रथम तो गुजरात हिन्दी भाषी प्रदेश का निकटवर्ती राज्य है । गुजराती एवं हिन्दी दोनों भाषाओं का एक दूसरे के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है । इन दोनों भगिनी भाषाओं को अलग हुए अभी पूरे पाँच सौ वर्ष भी नहीं हुए । दूसरा कारण यह है कि हिन्दी भाषा गुजराती से पूर्व ही परिपक्व हो चुकी थी । गुजराती के प्रथम कवि नरसिंह महेता [सन् 1411 - 1480] पहले ही विद्यापति, चन्द, गोरखनाथ और रामानन्द जैसे अनेक विद्वानों तथा संत भक्त कवियों ने हिन्दी भाषा को अपनाकर देशभर में उसको प्रचारित कर दिया था । तीसरा प्रमुख कारण अनेक धार्मिक सम्प्रदायों के हिन्दी के माध्यम से अपने आध्यात्मिक विचारों के प्रसार के लिए गुजरात को केन्द्र बनाना था । वल्लभ सम्प्रदाय, सूफी सम्प्रदाय, जैन धर्म और सन्त मत के व्यापक प्रभाव ने गुजराती कवियों को आकर्षित किया था । विशेष रूप से वैष्णव धर्म की प्रमुख शाखा वल्लभ सम्प्रदाय की प्रबलता ने व्रजभाषा का विशेष प्रचार किया । अन्त में गुजरात के मुसलमान बादशाहों तथा राजपूत राजाओं के हिन्दी प्रेम के कारण भी इस प्रदेश में हिन्दी को फलने-फूलने का पर्याप्त अवसर मिला । इस प्रकार गुजरात का हिन्दी के साथ प्रारम्भ से ही अत्यन्त निकट का सम्बन्ध रहा है । इस अवस्था में गुजराती कवियों द्वारा हिन्दी में काव्य रचना करना स्वाभाविक ही है ।

भौगोलिक दृष्टि से देखें तो कुदरत ने उसे चारों ओर से कुछ इस प्रकार आरक्षित किया है कि वह एक ओर महाराष्ट्र और सन्ध के अति निकट होते हुए भी हिन्दी प्रदेश अर्थात् राजस्थान और मालवा जैसे राज्यों का ज्यादा प्रभाव लिए हुए है अर्थात् गुजरात अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण हिन्दी भाषी प्रदेश के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर सका था ।

आशय यह है कि गुजरात को मध्यप्रदेशीय भाषा, साहित्य तथा संस्कृति के दक्षिण प्रदेश का सुगम मार्ग कहा जा सकता है । इसलिए गुजरात में मध्यदेशीय भाषा हिन्दी का प्रसार एवं उसमें साहित्य सृजन की परम्परा का प्रारम्भ अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होता है । यह अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण हिन्दी भाषी प्रदेश के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर सका था । यही कारण है कि गुजरात में हिन्दी को फलने-फूलने का व्यापक अवसर मिला ।

अगर गुजरात को उसकी राजनैतिक परिस्थितियों से परखें तो हम इस बात से मुँह नहीं मोड़ सकते कि गुजरात में हिन्दी भाषा के उद्भव एवं प्रचार-प्रसार में उसकी भौगोलिक परिस्थिति काफी हद तक जिम्मेदार है । यही कारण है कि गुजरात में हिन्दी भाषा पनपी,

10

इसका प्रचार एवं प्रसार हुआ और उसकी राजनैतिक परिस्थितियों ने उसे और भी दृढ़तर कर दिया ।

प्रागैतिहासिक काल से ही मध्यदेश से राजपूताना और गुजरात में शासकों के आगमन की अनेक कथाएँ मिलने लगती हैं । इनमें सर्वप्रथम उल्लेख महाभारत के युद्ध के समय गुजरात में यादवों द्वारा द्वारका की स्थापना का मिलता है । ऐतिहासिक काल में चन्द्रगुप्त मौर्य से लेकर गुप्त साम्राज्य के अन्त तक गुजरात, मालवा और कभी-कभी राजपूताने के साथ-साथ संयुक्त रूप से शासित होता रहा है । जैन परम्परा के अनुसार गुजरात के प्रथम शासक चालुक्य वंशीय राजा थे जो गंगा दोआब के कन्नौज प्रदेश से आये थे । इस समय में भी गुजरात मध्य देश से ही सांस्कृतिक दृष्टि से सर्वाधिक प्रभावित रहा है ।[1] अर्थात् गुजरात अपने आधुनिक रूप को प्राप्त करने से पूर्व तक निरन्तर मध्यप्रदेश के साथ एक राजनैतिक इकाई के रूप में बना रहा है । इसका आधुनिक रूप सन् 942 में मूलराजा द्वारा अनहिलवाड़ विजय के पश्चात् ही अस्तित्व में आता है ।

इस प्रकार में मुसलमानों के शासन के पूर्व तक राजनैतिक दृष्टि से गुजरात, मालवा और राजपूताने के साथ एक प्रदेश के रूप में एक छत्र के नीचे शासित होता रहा है । परिणाम स्वरूप इस काल में राजनैतिक दृष्टि से गुजरात भिन्न इकाई अवश्य बन गया, परन्तु सांस्कृतिक एवं भाषायी दृष्टि से वह उस समय भी मेवाड़, मालवा तथा राजपूताने के साथ घुला-मिला था और उज्जयिनी तथा मथुरा उसे सतत प्रभावित करते रहे ।

आशय यह है कि राजनैतिक दृष्टि से गुजरात हिन्दी भाषी प्रदेशों से अत्यधिक संबंधित रहा है । मुसलमान काल में भी सौराष्ट्र के सभी हिन्दू राजाओं ने अपना सम्बन्ध राजस्थान के राजपूतों के साथ किसी न किसी रूप में हमेशा बनाये रखा

---

1. गुजरात एंड इट्स लिटरेचर – के एम मुंशी – पृ० 8

है । गुजरात के सभी मुसलमान शासक तो उत्तर भारत से ही आते थे । परिणामस्वरूप न केवल मध्यप्रदेश की भाषा इनके साथ गुजरात में आयी, वरन् वहाँ की संस्कृति भी सहज ही गुजरात में व्याप्त होती रही ।

गुजरात अपनी उक्त राजनैतिक परिस्थितियों के कारण भारत के अन्य प्रान्तों की अपेक्षा हिन्दी भाषी प्रान्तों के अधिक निकट बना रहा है । इसलिए अन्य अहिन्दी भाषी क्षेत्रों की अपेक्षा गुजरात में हिन्दी काव्य परम्परा को विशेष रूप से विकसित होने का सुअवसर प्राप्त हो सका ।

सांस्कृतिक एकता एवं धार्मिकता : भौगोलिक दृष्टि से सुगम तथा राजनैतिक दृष्टि से सुदीर्घ काल तक हिन्दी भाषी प्रदेश के साथ एक इकाई के रूप में शासित होने के कारण गुजरात में एक ऐसी सांस्कृतिक परम्परा के अत्यधिक निकट ही नहीं समान भी है । डॉ० धीरेन्द्र वर्मा के शब्दों में "गंगा - यमुना के प्रदेश की संस्कृति का प्रत्यक्ष प्रदेश इस प्रदेश में दिखाई देता है । जलवायु, रहन-सहन, खान-पान तथा अन्य सांस्कृतिक क्रिया-कलापों की भिन्नता ही हमें गुजरात और हिन्दी भाषी प्रदेश में अलग मिलती है, बाकी गुजरात और हिन्दी भाषी प्रदेश में हमें साम्य ही दिखाई देता है" ।[1]

सभी दृष्टियों से हमें सर्वाधिक समानता का ही अनुभव होता है । त्यौहार पर्व, शिक्षा-दीक्षा, व्यवहार, आचरण, धार्मिक मान्यताएँ आदि सभी बातों में गुजरात और हिन्दी भाषी प्रदेश विशेष रूप से समान है । अनेक जातियाँ ऐसी हैं जिनका मूल हिन्दी भाषी प्रदेशों में ही है और जो समय-समय पर गुजरात आकर बस गई है । गुजरात तथा राजस्थान, मालवा आदि हिन्दी भाषी प्रदेशों में अनेक जातियाँ ऐसी हैं जो समान है, जिनमें आज भी वैवाहिक सम्बन्ध होते हैं । गुजराती परिवार भी व्यापार आदि के कारण हिन्दी भाषी प्रदेशों में बस गये हैं । विशेष बात यह भी है कि कई प्रमुख धार्मिक सम्प्रदाय हिन्दी भाषी प्रदेशों से आकर गुजरात में प्रचलित हुए हैं ।

1.

गुजरात अनेक सामाजिक, धार्मिक, व्यापारिक तथा सांस्कृतिक कारणों से हिन्दी भाषी प्रदेशों के साथ निकट से सम्बद्ध है, परिणामस्वरूप गुजरात और हिन्दी भाषी प्रदेश में किसी प्रकार सांस्कृतिक भेद नहीं देखा जा सकता । इन सब कारणों से हम यह कह सकते हैं कि गुजरात और हिन्दी भाषी प्रदेशों की सांस्कृतिक एकता के कारण गुजरात में हिन्दी भाषा प्रदेशों के समानान्तर हिन्दी की साहित्यक परम्परा सहज ही विकसित हो सकी ।

उपर्युक्त विकास में गुजरात की गुजराती भाषा का योगदान भी महत्वपूर्ण है । हमने पहले देखा कि भारत एक विशाल और समृद्ध देश है । इसमें कई प्रान्त हैं । सबकी अपनी निजी विशेषताएँ हैं । उसी प्रकार सब की अपनी अलग भाषा भी है । इन सभी भारतीय भाषाओं में भी गुजराती ही हिन्दी की सबसे निकटवर्ती भाषा रही हैं । गुजराती और हिन्दी भाषी साहित्य भाव, विचार और रूप आदि की दृष्टि से समान होने से गुजरात में हिन्दी भाषा की लोकप्रियता बढ़ी ।

गुजराती और हिन्दी भाषा का साम्य भी, विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इसी साम्य के कारण डॉ० ग्रियर्सन ने अन्तरंग भाषा समूह के अन्तर्गत पश्चिमी हिन्दी के साथ इसे परिगणित किया है । गुजराती और हिन्दी की अत्यधिक निकटता ही गुजरात में हिन्दी के उद्भव एवं विकास के लिए कारण बनी । इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि भौगोलिक नैकट्य, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध, साहित्यिक तथा भाषाओं में समानता आदि कुछ ऐसी बातें हैं जिनके कारण गुजरात में प्रारम्भ से ही हिन्दी भाषा और हिन्दी काव्य परम्परा मिलने लगती है । प्रारम्भ से ही हिन्दी भाषी प्रदेश की साहित्यिक परम्परा गुजरात में वर्तमान रही है जो गुजराती साहित्य के प्रारम्भ हो जाने के पश्चात् भी गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा के रूप में हमें आधुनिक काल तक अविच्छिन्न रूप से प्राप्त होती है ।

गुजरात के जैन साधुओं ने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी को भी अपने उपदेशों की भाषा के रूप में स्वीकृत किया।जो साधु गुजरात के बाहर रहे उन्होंने तो हिन्दी भाषा का ही प्रयोग अपने लेखन के लिये किया । विशेष बात तो यह है कि जो जैन साधु न कभी गुजरात छोड़ बाहर गये फिर भी उन्होंने अपने लेखन में मुख्य रूप से हिन्दी भाषा को ही प्राधान्य दिया अर्थात् सभी प्रमुख धार्मिक सम्प्रदायों ने हिन्दी को अपने धर्म की पवित्र भाषा के रूप में स्वीकृत किया और हिन्दी काव्य परम्परा को विकसित

करने में न केवल अवसर प्रदान किया वरन् स्वयं उसके विकास में सक्रिय योगदान भी दिया है । जैसा कि संकेत किया गया है गुजरात में हिन्दी भाषा के विकास में अनेक धार्मिक सम्प्रदाय तथा उनके आचार्यों एवं प्रचारकों का भी महत्त्वपूर्ण योगदान रहा । संत कबीर के अनुयायी आज भी सारे गुजरात में मिलते हैं जो कबीर की हिन्दी रचनाओं को बड़ी श्रद्धा के साथ पढ़ते हैं, पढ़ाते भी हैं । कबीर का गुजरात आगमन भी एक महत्त्वपूर्ण कारण है ।

गुजरात में दूसरे भी कई ऐसे संत-भक्त हो गये जैसे अखा, दादू, प्राणनाथ आदि जिन्होंने हिन्दी भाषा भाषी प्रदेशों राजस्थान, बनारस, पन्ना बुंदेल खण्ड आदि स्थानों में या तो यात्राएँ की या अपना कार्य क्षेत्र बनाकर स्थान बनाए जहाँ अनुयायियों का आवागमन होता रहा ।

गुजरात की हिन्दी भाषा के विकास में गुजरात की जनता का भी हिन्दी भाषा के लिए प्रेम, सहकार समुल्लेखनीय है । गुजरात के शासकवर्ग ने भी हिन्दी भाषा को हिन्दी काव्य परम्परा को हर प्रकार से विकसित किया है । हिन्दी भाषा को सहज द्वितीय राजभाषा के रूप में । मई 1960 से ही स्वीकृत कर लिया गया था । यही कारण है कि किसी बाह्य आवश्यकता तथा भौतिक प्रयोजन के अभाव में भी यहाँ व्यक्तियों ने हिन्दी में अपने भाव और विचारों को अभिव्यक्त कर इसे भारत की सहज राष्ट्रभाषा सिद्ध कर दिया है ।

गुजरात के साहित्यिक इतिहास की संक्षिप्त रूप रेखा : गुजरात एवं गुजरातियों का हिन्दी साहित्य में योगदान अवर्णनीय है ।

गुजराती साहित्य और हिन्दी साहित्य का विकास करीबन एक सा रहा है । हमें गुजरात में प्रारम्भिक काल (सन् 1185 - 1456), मध्यकाल (सन् 1456 - 1825), आधुनिक काल (सन् 1825 के बाद) इस रूप में कालविभाजन मिलता है । इस समय दौरान हमें नरसिंह महेता, भालण, अखो, मीरा आदि सैकड़ों कवियों का योगदान प्राप्त होता है ।

प्रारम्भिक काल में गुजराती साहित्यकारों ने इस काल को चारणकाल या रासोकाल कहा । जिस प्रकार हिन्दी में रासो साहित्य अर्थात् "पृथ्वीराज रासो" "बीसलदेव रासो" आदि वीर रस प्रधान ग्रन्थ लिखे गए उसी प्रकार गुजराती साहित्य में "बाहुबलि रास" "रणमल छन्द" जैसे ही वीर-रस प्रधान काव्य रचे गए अर्थात् हिन्दी और गुजराती का विकास प्रारम्भ से आज तक समानान्तर रूप से ही हुआ है ।

प्रसिद्ध भाषा विशारद ग्रियर्सन महोदय ने उचित ही कहा है - "हिन्दी प्रारम्भ से ही एक आन्तर्भाषा के रूप में विकसित हुई थी ।" अपने जन्मकाल से ही यह भारत के समस्त राज्यों में बोली और समझी जाती रही है । देश के प्रायः सभी प्रदेशों में हिन्दी के व्याप्त एवं प्रचलित होने के प्रमाण उपलब्ध हैं । पंजाब के गुरू नानक, महाराष्ट्र के नामदेव, बंगाल के विद्यापति आदि की तरह गुजरात के कवियों का हिन्दी योगदान भी अवर्णनीय है ।

गुजरात में मुसलमानों, मराठों और अंग्रेजों के निरन्तर आक्रमण से सदा अशान्ति ही बनी रही और काव्य के लिए शान्ति अनिवार्य है । साथ ही अन्य प्रदेशों की भाँति यहाँ पर आश्रयदाता राजा - महाराजा तथा जमींदार एवं जागीरदार भी अधिक नहीं हुए । फिर भी पन्द्रहवीं शताब्दी से लेकर आधुनिक समय तक नौ सौ से भी अधिक कवि ऐसे हुए हैं, जिन्होंने स्वभाषा गुजराती में काव्य रचना करने के साथ-साथ हिन्दी अर्थात् ब्रज, अवधी, डिंगल एवं खड़ी बोली में भी रचनाएँ की हैं ।

मध्यकाल दो भागों में विभक्त है - एक भक्तिकाल ‖पूर्वार्द्ध‖ और दूसरा अलंकृत-काल ‖उत्तरार्द्ध‖ । इसके पूर्वार्द्ध काल में निर्गुण-भक्ति, जैन-भक्ति, वैष्णव-भक्ति एवं सूफियों की प्रेम-भक्ति-सम्बन्धी हिन्दी काव्य रचनाएँ भी प्रचुर परिमाण में हुई हैं । इस काल के प्रमुख कवियों में गुजराती के प्रथम कवि नरसिंह महेता ‖सन् 1470 - 1531‖ का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है । जूनागढ़ निवासी इस कवि ने हिन्दी में भी अनेक कविताएँ रची है । "शिवसिंह सरोज" नामक हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रन्थ में सूरदास, नन्ददास, तुलसीदास आदि भक्त-कवियों के साथ ही नरसिंह महेता का भी नाम गिनाया गया है । इसी के आधार पर "मिश्रबन्धु विनोद" में भी हिन्दी के भक्त कवियों में महेताजी का नाम लिखा गया है । "कृष्णानन्द व्यासदेव - रचित "रागसागरोद्भव रागमल्पद्रुम" नामक हिन्दी ग्रन्थ में भी सूरदास, तुलसीदास आदि की कविताओं के साथ इनकी कविताएँ संगृहित है ।

नरसिंह महेता की भक्तिमय, विशाल पद रचनाओं के कारण ही "आदिभक्ति युग" का आरम्भ होता है । नरसिंह महेता पर संस्कृत के जयदेव के "गीत गोविन्द" का, महाराष्ट्रीयन वारकरी वैष्णवों को अभंगों का भी असर नजर आता है । "भणे नरसैयों" शब्दों पर तो जयदेव के "भणति जयदेव" और वारकरी वैष्णव कवि नामदेव के "नामा महणे" का सम्मिलित असर प्रतीत होता है । नरसिंह का ब्रजभाषा के कई ठेठ शब्दों से

परिचय रहा है, इतना ही नहीं नरसिंह की गुजराती पदावली का अर्थात् काव्यबानी का कृष्ण भक्ति की व्रजभाषा काव्य परंपरा पर असर परिलक्षित किया जा सकता है ।

भालण (सन् 1459 – 1514) के नाम पर गुजराती में लगभग पन्द्रह काव्य ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं । इनके "भागवत दशम स्कन्ध" ग्रन्थ में गुजराती पदों के साथ कुछ शुद्ध व्रजभाषा के पद भी उपलब्ध होते हैं । उन्होंने उसी ग्रन्थ का भावानुवाद कड़वा बद्ध "आख्यान" के रूप में किया है (ई० सन् 1500 के करीब) भालण ने कृष्ण की लीला के स्वतन्त्र पदों की रचना भी की है । रामानुज सम्प्रदाय के स्वामी रामानंद की गुजरात यात्रा के समय भालणकेइन के सम्पर्क में आने के प्रसंग का गुजराती साहित्य में प्रायः सभी इतिहासकारों ने समर्थन किया है । हो सकता है भालण की हिन्दी-व्रज पर नरसिंह की पूर्ववर्ती काव्य भाषा परम्परा के साथ-साथ रामानंदीय हिन्दी काव्य बानी का असर रहा हो । अष्टछापी सूरदास के पूर्व भालण के विद्यमान होने के प्रमाण मिलते हैं । अतः यथक भालण के कृष्णलीलापरक व्रजभाषा के पदों पर सूरदासके प्रभाव को स्थापित नहीं किया जा सकता ।

इन्हीं के समकालीन वैष्णव-कवियों में पाटण के निवासी केशवदास कायस्थ का नाम लिया जाता है । इनके गुजराती ग्रन्थ "कृष्ण लीला काव्य" में व्रजभाषा की अनेक फुटकर रचनाएं देखने को मिलती हैं । बड़ौदा के समीपस्थ चांपानेर के निवासी और सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ बैजू बावरा या बैजनाथ [illegible] होने के साथ-साथ व्रजभाषा के उच्च कोटि के भक्त कवि थे । इसी काल में अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि कृष्णदास अधिकारी और श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका मीराबाई ने भी अपने काव्यों से हिन्दी साहित्य को अत्यधिक योगदान दिया है । इसी सदी में जूनागढ़ के कवि नरमिया ने और उत्तर गुजरात के गिरधरलाल नागर ने भी व्रजभाषा में कविताएँ लिखी ।

निर्गुण विचारधारा की सन्त परम्परा में गुजरात के अहमदाबाद निवासी ब्रह्मज्ञानी अखो (सन् 1591 – 1656) सबसे अधिक प्रसिद्ध है । ये अक्खड़ और मनमौजी थे । इन्हें गुजरात का कबीर कहा जाय तो अनुचित न होगा । इन्होंने अनेक काव्य ग्रन्थ रचे हैं । इनके हिन्दी ग्रन्थों में "सन्त प्रिया", "ब्रह्मलीला", "दो हजार से भी अधिक हिन्दी साखियाँ"और "एक लक्ष रमणी" विशेष उल्लेखनीय हैं ।

इसी परम्परा में "दादू पन्थ" के प्रवर्तक महात्मा दादू दयाल का नाम भी आदर के साथ लिया जाता है । ये अहमदाबाद के थे । वे अत्यन्त शान्त प्रकृति के

थे । उन्होंने हिन्दी में ﴾व्रज﴿ दोहों की रचना की ।

गुजरात के जैन कवियों की हिन्दी सेवा सुपरिचित है । जैन - कवियों में आनन्दघन, ज्ञानानन्द, विनय विजय, यशो विजय और किशनदास प्रमुख है । इसी सम्प्रदाय के बाबा किशनदास का "उपदेश बावनी" नामक व्रजभाषा में लिखा गया एक लघु काव्य भी विशेष प्रसिद्ध है ।

"धामी पंथ" के प्रवर्तक संत प्राणनाथ ﴾सन् 1619 में जन्म﴿ सौराष्ट्र के जामनगर के रहनेवाले थे । इन्होंने अपने काव्य ग्रन्थ हिन्दी में लिखे हैं । उसी समय सोमनाथ के निवासी कवि पुहकर ने व्रजभाषा में "रस रतन" नाम के ग्रन्थ की रचना की थी । गुजरात के मुसलमान सूफी सन्तों ने अमीर खुसरो की भाषा शैली का अनुकरण करते हुए खड़ीबोली में काव्य रचना का कार्य आरम्भ किया । उनमें शेख बहाउद्दीन बाझन ﴾सन् 1388 - 1506﴿ काजी महमूद दरियायी ﴾सन् 1440 - 1535﴿ शाह अलीजी गामधनी ﴾मृत्यु सन् 1567﴿ और हजरत खूब मुहम्मद चिश्ती ﴾सन् 1613﴿ के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

मध्यकाल के उत्तरार्द्ध के प्रमुख हिन्दी काव्य रचयिताओं में कविश्वर केवलराम का नाम प्रथम आता है । इन्होंने व्रजभाषा में एक उत्तम काव्य रचना की । वे मूल जूनागढ़ के थे किन्तु अहमदाबाद के नवाबों की सेवा में रहे । झालावाड़ के अमरसिंह तथा मानसिंह और कच्छ के लखपतिजी ने हिन्दी की समृद्धि में अपना योगदान दिया है । प्रवीण सागर व्रज और खड़ीबोली में लिखा गया उत्कृष्ठ ग्रन्थ है ।

अहमदाबाद के दलपतिराय और बंशीधर दोनों ने व्रजभाषा में "अलंकार" नामक सरल व सुन्दर ग्रन्थ की रचना की । भड़ौच के कवि जहुराम की व्रजभाषा में लिखित कविताएँ भी भुलाई नहीं जा सकती । बड़ौदा निवासी आदितराम तथा उत्तमराम मानाजी गायकवाड़ के पास रहकर व्रजभाषा में अपनी फुटकल काव्य रचना करते थे । इस काल के अन्तिम प्रभावशाली कवि दयाराम ﴾सन् 1777 - 1852﴿ हुए हैं । ये चाणोद के रहनेवाले थे । इन्होंने सवा लाख पदों की रचना की थी । उन्होंने कई संग्रह लिखें । "सतसैया" व्रज भाषा के दोहों का संग्रह है । "वस्तुवृन्त दीपिका" नामक एक ग्रन्थ में इनके हिन्दी पदों का संग्रह किया गया है ।

सन् 1749 ई. में एक व्रजभाषा पाठशाला की स्थापना हुई । शायद वही हिन्दी भाषा के परिमार्जन के लिए कारणीभूत हुई । 18 वीं एवं 19 वीं शताब्दी में स्वामीनारायण सम्प्रदाय के अनेक भक्त कवियों ने हिन्दी में सुन्दर काव्य रचना की थी । इसमें स्वामी मुक्तानन्द, ब्रह्मानन्द और प्रेमानन्द के नाम उल्लेखनीय है । ब्रह्मानन्द ने "सम्प्रदाय प्रदीप" "सुमति प्रकाश" और "ब्रह्म विलास" जैसे सुन्दर ग्रन्थों की रचना हिन्दी में ही की थी ।

आधुनिक काल में गुजरात का हिन्दी को दिया गया योगदान स्वर्णाक्षरों में लिखा जाने योग्य है । आधुनिक हिन्दी खड़ी बोली गद्य के उद्भावकों में लल्लूलालजी [सन् 1763 - 1835 ई0], दलपतराम [1820 - 1917], नर्मदाशंकर [1833 - 1886] और गोविन्दभाई गिल्लाभाई का नाम विशेष रूप से लिया जाता है ।

हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी प्रमुख इतिहासकारों ने आगरा निवासी लल्लूलाल केमूलतः गुजरात निवासी मानकर "लल्लूलाल गुजराती" के रूप में उल्लेख किया है । उनकी हिन्दी रचनाओं की कथावस्तु का गुजरात के प्रेमाख्यानों के साथ अनुसंधान आसानी से किया जा सकता है । इस संदर्भ में लल्लूलालजी का "प्रेमसागर" तथा "सिंहासन बत्तीसी" "वैताल पचीसी", "शकुन्तला नाटक" और "माधोनल" आदि उल्लेखनीय है । दलपतराम का "श्रवणाख्यान" नामक व्रजभाषी काव्य संग्रह है । वीर नर्मद ने हिन्दी में प्रयुक्त मुक्तक काव्य की रचना की । साथ ही हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान देने का भी प्रयास किया । जबकि गोविन्दभाई गिल्लाभाई ने व्रजभाषा में "नीति विनोद" "वक्रोक्ति विनोद" "प्रारब्ध पच्चीसी" "पावस पयोनिधि" "षट्ऋतु", "श्रृंगारसरोजिनी" और "गोविन्द ज्ञान बावनी" व्रजभाषा में लिखा ।

आर्य - समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द [सन् 1824 - 1883] की हिन्दी सेवा सुविदित ही है । इन्होंने "सत्यार्थ प्रकाश","आर्याभिविनय", "व्यवहारभानु" और "गोकरुणानिधि" इत्यादि अनेक ग्रन्थ लिखे हैं । गुजरात के अन्य छोटे छोटे कवियों में मोरबी के हीराचन्द कानजी, सूरत के कवि फकीरुद्दीन, अहमदाबाद के कवि कृष्णराम भट्ट आदि के नाम स्मरणीय हैं । इन सबकी कविताएँ खड़ी बोली हिन्दी में हैं । सौराष्ट्र के चारणी कवि इसामाई मायाभाई काग [ई0स0 1904 जन्म] "राष्ट्र ध्वज पचिसी" नामक कविताएँ हिन्दी में लिखी है ।

अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी भाषा को विशेष स्थान देने में गुजरात के कई साहित्यकारों ने योगदान दिया है। काका साहेब कालेलकर ने हिन्दी भाषा को राष्ट्रीय स्तर पर लाने के लिए विशेष रूप से प्रयत्न किए। मूलतः मराठी भाषाभाषी होते हुए भी इन्होंने गांधीजी के आदेशानुसार गुजरात में हिन्दी का व्यापक प्रचार-प्रसार करने में महत्वपूर्ण कार्य किया है। इनकी प्रायः सभी कृतियाँ हिन्दी में अनूदित है। इतना ही नहीं इन्होंने स्वयं अपनी कुछ रचनाओं का निर्माण परिमार्जित हिन्दी में भी किया है। ठीक उसी तरह श्रीमंत सयाजीराव गायकवाड़ भी हिन्दी भाषा के विकास के लिए प्रयत्नशील रहे। उन्होंने अपने राज्यकाल दौरान अपने राज्याधीन गुजरात में हिन्दी की विविध स्तरीय परीक्षाओं का आयोजन किया। उन्होंने हिन्दी में चर्चाएँ, विविध स्पर्धाएँ और कवि सम्मेलनों का विशेष रूप से आयोजन कराए। हिन्दी को राष्ट्रभाषा का स्थान देने का सशक्त प्रयास भी किया।

गुजराती साहित्य के अनुसार सन् 1920 से गांधी-युग माना जाता है। महात्मा गांधी के द्वारा की गई हिन्दी सेवा स्वर्णाक्षरों में लिखी गई है। उन्हीं के अथक परिश्रम से आज हिन्दी राष्ट्रभाषा का स्थान पा सकी है।

इस समय में किशोरीलाल मशरूवाला, दुलेराय काराणी, कविवर सुन्दरम् और हसित बुच, पिनाकिन ठाकुर आदि अनेक साहित्यकारों ने भी अपना योगदान दिया है।

आधुनिक काल तक आते-आते गुजरात में हिन्दी के प्रति लोगों का प्रेम बढ़ता ही गया। गुजरात में हिन्दी को गुजराती के बाद दूसरी बोलचाल की सहज भाषा के रूप में भी स्थान मिला। बढ़ते-बढ़ते गुजरात में हिन्दी भाषा ने अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। फलतः गुजरात में निर्मित हिन्दी रचनाओं में साहित्य के प्रायः सभी गद्य पद्यात्मक रूपों का विपुल वैविध्य नजर आता है। प्रबन्धकाव्य से लेकर गजल सॉनेट, हाईकु, क्षणिकाएँ आदि लघु काव्य रूपों में भी विपुल रचनाएँ रही है।